International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

उपन्यास झीनी–झीनी बीनी चदरिया में नारी स्थिति व वर्ग संघर्ष

सुशील कुमार
शोधार्थी
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय,
रोहतक

अब्दुल बिस्मिल्लाह का उपन्यास झीनी–झीनी बीनी चदरिया बनारस के साड़ी बुनकरों की संघर्षमय जिन्दगी पर केन्द्रित है। इस उपन्यास के जरिए उपन्यासकार ने शोषण के उन निकृष्तम रूपों से साक्षात्कार कराया है और उनके प्रति तीखा विरोध पैदा किया है। सभी अस्वस्थ परम्पराओं और सामाजिक विकृतियों का दंश नारी को झेलना पड़ता है। नारी उच्च वर्ग से लेकर निम्न वर्ग तक पुरुष की भाँति सुख सुविधाओं की हिस्सेदार नहीं बन पायी है। निचले तबके में तो नारी जीवन नितान्त निरीह अवस्था में है, यही कारण है कि मतीन की पत्नी अलीमुन निर्धनता में भूखी प्यासी रहकर रात दिन परिश्रम करती है जिसके परिणामस्वरूप वह टी0 बी0 से पीड़ित होती है। उसका पति, पत्नि की इस स्थिति से परिचित है किन्तु वह कुछ भी कहने में असमर्थ है। वह जानता है "घर का जो काम है, वह बीबी को करना ही होगा। फेराई–भराई, नरी–टोटा, हाँडी चूली..... सभी कुछ करना होगा। बिन किए काम चलेगा नहीं और रहना भी होगा परदे में। खुली हवा में घूमने का सवाल नहीं। समाज के नियम सत्य है, इन्हें तोड़ना गुनाह है। छितनपुरा से लेकर मदनपुरा तक कहीं भी इस विषय में अन्तर नहीं है। हजरत अययूब के वंशज ..... मतीन को यही बताया गया

है..... सच क्या है? वह नहीं जानता पर समाज का जो नियम है, उसे मानता है। जैसे सब मानते हैं"[1]

इसी भाँति लतीफ की पत्नि कमरून शराबी पति के अत्याचारों को सहन करती है, पति से तलाक का दुःख भोगती है। रहनेवा एक सुन्दर युवती होते हुए भी बीमारी का शिकार होती है। बीमारी का उपचार न करके टोने टोटके के चक्कर में पड़कर उसकी खून की उल्टी तक को 'जिन्न' का असर मानकर उसके माँ–बाप से लेकर पति तक सभी उसकी जिन्दगी को नष्ट कर देते हैं।

मुस्लिम समाज में नारी की क्या स्थिति है? विवाह सम्बन्धी विधान और मूल्य कितने खोखले हैं? इसे लेखक ने लतीफ कमरून सम्बन्धी प्रसंग के माध्यम से व्यक्त किया है। कमरून का पति शराब के नशे में उससे झगड़ा करता है और उसे नशे की हालत में तलाक दे बैठता है। नशे की हालत में भी तलाक कहना इस्लाम की नजर में वैवाहिक बंधन को तोड़ने के लिए पर्याप्त है। अलीमुन जब मतीन को लतीफ कमरून के तलाक का समाचार सुनाती है तो मतीन का चिन्तन नारी की समाज में स्थिति पर प्रकाश डालता है। वह सोचता है। "तलाक तो बिरादरी में आम बात हो गई है। औरत जात की आखिर हैसियत ही क्या है? जब चाहो चुतड़ पर लात मार के निकाल दो। औरत का और इस्तेमाल ही क्या है? कतान फेरे, हंडी चुला करे, साथ में सोयें, बच्चे जनै और पाँव दबाये। इनमें से अगर किसी भी काम में हीला हवाला करे तो कानून इस्लाम का पालन करो और बोल दो कि मैं तुम्हें तलाक देता हूँ। तलाक! तलाक! तलाक!"[2]

लतीफ को जब अपनी गल्ती का अहसास होता है तो समाज के विधान के अनुसार वह कमरून को पत्नी के रूप में लाने में असमर्थ होता हैं। लतीफ कई बार सोचता है कि वह कमरून को बुलाकर रखेगा लेकिन 'शरीयत आड़े आ जाती है, जब तक हलाला' न हो जाए दुबारा लतीफ के

साथ वह नहीं रह सकती। लतीफ उसे तब ही रख सकता है जब कमरून का निकाह किसी ओर से हो जाए और एक रात उसका पति अपने साथ रखकर तलाक दे दे। ऐसा करने पर ही लतीफ के साथ उसका निकाह हो सकता है। लतीफ ओर मतीन दोनों ही विवाह सम्बन्धी इस विधान को व्यर्थ समझते हैं। वे सोचते हैं कि इस शरीयत में भी बड़ा झंझट है। यह भी कोई बात हुई कि अपनी ही बीबी को आप दुबारा सिर्फ इसलिए नही रख सकते कि आपने तीन बार उसके सामने 'तलाक' लफ्ज का इस्तेमाल कर दिया है।"[2]

मतीन लतीफ को परामर्श देता है वह कमरून को वापिस बुलाले किन्तु लतीफ सामाजिक विधान को चुनौती देने का साहस नहीं बटोर पाता। कमरून की अपने पति के प्रति निष्ठा सामाजिक विधान को किनारे रखकर उसकी सेवा के लिए तैयार करती है। वह पंचायत के समक्ष बेधड़क कहती है कि वह किसी अन्य पुरुष के साथ एक रात गुजारने से बेहतर मरना पसन्द करेगी। इस प्रसंग की अवतारणा करके लेखक ने मुस्लिम समाज में व्याप्त वैवाहिक विधान की रिक्तता को जाहिर किया है। और एक आम आदमी इस सम्बन्ध में क्या सोच सकता है या सोचता है इस बात को भी स्पष्ट किया गया है। न्याय की ठेकेदार पंचायत और बिरादरी की चिन्तन सारिणी और इस प्रकार की कुरीतियों में उनके योग को भी यहाँ रेखांकित किया गया है।

नारी की स्थिति सब जगह एक सी है। मऊ पहुँच कर मतीन को ज्ञात होता है कि औरतों की जिन्दगी कहीं भी मर्दों से बेहतर नहीं है। वह मऊ में देखता है – "करधे पर प्रायः औरतें ही बैठा करती हैं, मर्द बाहरी काम किया करते हैं। अर्थात् वहाँ बनारस में औरतो की जिन्दगी कतान में बन्द हैं और यहाँ करधे में, बच्चे पैदा करना, खाना पकाना, शौहर की खिदमत करना और पर्दे में रहना– ये सब चीजें अतिरिक्त और समान है।"[4]

उपन्यासकार ने बनारस के जुलाहों या बुनकरों की जिन्दगी के संघर्ष की गाथा को मतीन–अलीमुन, रऊफ चाचा उनकी बेटी जनबुनिया, वशीर, अल्लाफ और इकबाल आदि के माध्यम से व्यक्त किया है। ये चरित्र निराशावादी नहीं है। वे इनमें आस्था और जिजीविषा है, वे परिस्थितियों से समझौता नहीं करते। वह संघर्ष करते है। अन्याय के विरूद्ध जिहाद छेड़ते हैं। कारीगरों व मजदुरों का भीषण शोषण होता है। शोषण की परिकाष्ठा में उन्हें यह अहसास अवश्य होता है कि व्यवस्था में कहीं न कहीं दोष अवश्य है कि अमीर अधिक अमीर व गरीब अधिक गरीब ही नहीं अपितु पशुवत जीवन यापन करने के लिए विवश क्यों है?

इस तरह की चेतना जब मजदूर वर्ग में उत्पन्न होती है तो वह संगठित होना चाहता है। शोषण के विरूद्ध संगठित होना चाहता है। शोषण के विरूद्ध खड़ा होना चाहता है। हाजी अमीरूल्लाह शोषक वर्ग का प्रतिनिधि है। वह मतीन, अल्ताफ जैसे अनेक बुनकरों का शोषण करता है। मतीन जब साड़ी बनाता है तो हाजी साहब मजदूरी में भी टाल–मटोल करता हैं और मजदूरी घटाने के बहाने तलाश करता है। हाजी साहब साड़ी खोलकर खूब बारीक निगाह से चेक करते है और शुरू हो जाते है :– "का म्यां देखो कइसी साड़ी बीने हो? केतना सा ऐब है। एछम चउपट करके रख दीये हो। पूरी सड़िया चउपट है। कइसे ई बिकिए?"[5]

का ऐब हे गिरस? मतीन सहमते–सहमते पूछता है तो हाजी साहब और बिफर पड़ते हैं :–

"अभइन पूछेती कि का ऐब है? साड़ी
पुजैती को चैक नॉही करतौ? उल्टे
हमसे ही पुछते हो कि का ऐब है?
देखो, एज्जन ताग मइला है, एज्जन
दाग है। दस रूपिया कम होइए"[6]

मतीन उन सबसे दुखी हो जाता है। उसे मालूम पड़ता है कि सरकार ने बुनकरों के लिए बहुत सी योजनाएँ बना रक्खी है। मतीन एक सोसायटी बनाने की सोचता है परन्तु इसके लिए उसको सोसाइटी के मैम्बरों की आवश्यकता है।

कारीगरों के पास पैसे नही है जो वे मैम्बर बन सके जो लोग बानी पर बीनते हैं उन्हें मजदूरी इतनी कम मिलती है कि हफ्ते का खर्च चलाना ही मुश्किल हो जाता है। जो लोग अपना माल खरीदकर बीनते हैं उनके ऊपर कतान और कलाबहू का कर्जा इतना होता है कि इधर से आया और उधर गया। गिरस्तां के घर जाकर मजदूरी पर बिनने वालों की हालत तो और भी खराब है। किसी भी मामूली बुनकर के लिए एक सौ दो रूप्ये का इन्तजाम करना मुश्किल है।"[7] वह अल्ताफ को 'सोसाइटी' निर्मित करने का लक्ष्य समझाता है। और कहता है कि "पैसा बड़ी चीज नही है, बड़ी चीज है एक मकसद। इस मकसद के साथ उस जैसे अनेक गरीब जुलाहों का भविष्य जुड़ा हुआ है। और अगर सोसायटी बन गई तो वह दिन जल्दी ही आएगा जब हर अंसारी भाई के पास अपना करधा होगा, अपना कतान होगा और किसी की गिरस्तां का उस पर शासन नहीं होगा। एक गरीब बुनकर के माल का भी तब एक्सपोर्ट हो सकेगा।"[8]

पत्नी की गम्भीर स्थिति में भी वह अपनी बिरादरी के उत्थान के लिए कठिन परिश्रम करता है। वह अपनी हर पराजय पर साहस बटोरता है। अपनी दुर्दशा की वह तनिक भी परवाह नहीं करता। उसकी स्थिति को निम्न उदाहरण के माध्यम से स्पष्ट किया जा सकता है :– "उसके पावं में प्लास्टिक के जूते हैं वे फट गए है। एक जूता ऐड़ी की ओर और दूसरा सामने की और काफी दूर तक कट सा गया है। दो बार मोची से सिलवा चुका है पर न जाने कैसा धागा लगाता है कि हफ्ता भर भी सिलाई नही चलती। जूते में से पाँव उसके निकले जा रहे हैं। मगर उसकी चाल धीमी

नही हो रही।"[9] उस उदाहरण के माध्यम से मतीन की दयनीय दशा का चित्रण किया गया है। इस प्रकार की स्थिति प्रत्येक मजदूर कारीगर की है, जो दिन भर परिश्रम के बावजूद अपनी मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी नहीं कर पाता है। यही कारण है कि दिन भर परिश्रम के पश्चात् थका हारा मतीन यह सोचने के लिए विवश होता है। "हमारी यह हालत आखिर कब तक रहेगी? क्या हम हमेशा–हमेशा तक गिरस्तो की गुलामी करते रहेंगे? क्या हम अपने पैरो पर कभी नहीं खड़े हो सकेंगे? .... आखिर वह दिन कब आयेगा जब एक आम मजूर बुनकर भी एक बेहतर जिन्दगी जी सकेगा? वह एक मजूर नहीं, बल्कि एक फनकार समझा जाऐगा.....?"[10]

मतीन के इस चिंतन के विपरीत अलीमुन सोचती है। "अरे जो गरीब है वो गरीब ही रहेगा, चाहे लाख कोशिश करो। अल्हा मिया ने जिसे अमीर बना दिया है वह अमीर ही रहेगा। लोन लेने से गरीबी थोड़े ही मिट जाएगी अरे फकीरी और बादशाहत सब खुदा की देन है।"[11]

मतीन का सारा संघर्ष 'कोओपरेटिव सोसाइटी' बनाने तक सीमित रहता है। मतीन लक्ष्य सिद्धि के लिए अपनी पूरी जिन्दगी लगाता है उसे मतीन का बेटा इकबाल पूरा करता है। इकबाल को उपन्यासकार ने नवीन चेतना के प्रतीक के रूप में चित्रित किया है। वह आज के श्रमिक वर्ग की अधिकार चेतना और पूंजीवादी मूल्यों के प्रतिरोधी के रूप में उभरकर सामने आता है। इकबाल कहता है कि "सरमायदारों की तिक्डमें अब टूटनी चाहिए और आम बुनकरों को उनका हक मिलना ही चाहिए। हमारे बापों ने भले ही सब कुछ बर्दाश्त किया पर हम नहीं करेंगे। हम एहतेजाज करेगे।"[12]

वह बुनकर समाज को अपने अधिकारों के प्रति सजग करता है। वह सटटादारों, आढतियों, कोठीदारों सेठ साहुकारों के प्रति नफरत ही पैदा नही करता बल्कि उनके विरूद्ध आन्दोलन जारी करके लोहा लेने के लिए

श्रमिक वर्ग को तैयार करता है। वह उन्हें यह अनुभूत करवाता है कि पच्चीस–तीस करोड़ रुपयों की साड़ियां श्रमिक वर्ग के श्रम से तैयार होती हैं परन्तु उन्हें इसके बदले में क्या मिलता है? सिर्फ लुंगी! भैस का गोश्त! और नंग धड़ंग जाहिल बच्चे ! टी. बी. की बीमारी से छटपटाती हुई औरतें। इससे ज्यादा और क्या मिलता है?"[13]

इसके अतिरिक्त उपन्यासकार ने मुस्लिम समाज में व्याप्त नाना सामाजिक विकृतियों और मूल्यहीनता का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करते हुए उनके सांस्कृतिक उत्सवों–त्योहारों की विशद जानकारी प्रस्तुत की है। उपन्यास का प्रयोजन बुनकरों, श्रमिकों, मजदूरों के जीवन की स्थितियों व वर्ग चेतना का विकास दिखाना रहा है।

संदर्भ

1. अब्दुल बिस्मिल्लाह : झीनी–झीनी बीनी चदरिया, राजकमल प्रकाशन, पृ0 सं0 88
2. वही, पृ0 सं0 58
3. वही, पृ0 सं0 66
4. वही, पृ0 सं0 166
5. वही, पृ0 सं0 17
6. वही, पृ0 सं0 18
7. वही, पृ0 सं0 34
8. वही, पृ0 सं0 87
9. वही, पृ0 सं0 112
10. वही, पृ0 सं0 80
11. वही, पृ0 सं0 224
12. वही, पृ0 सं0 232
13. वही, पृ0 सं0 58

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017